RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : KANPUR HO/002/2022-24
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

फरवरी-2024 | वर्ष - 16 | अंक : 01 | मूल्य : 5/-

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (सहा.अभि. जलकल विभाग), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश :
सुनील कुमार, ढेलवा, गाजीपुर (उ.प्र.), मो.: 9935363730, 9170836363
योगेन्द्र कुमार (ब्यूरो चीफ चित्रकूट मण्डल) मो.: 8299162841
हमीरपुर ब्यूरो प्रमुख - रघुवर प्रसाद, मो.: 9793739030
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख लखनऊ मण्डल :
राजकुमार, उन्नाव
मो.: 9889273743, 9392660070
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य : ब्यूरो प्रमुख
रमा गजभिये, मो.: 7828273934
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001,
मो. : 09887512360, 0144-3201516
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक, शाखा-पी.पी.एन. मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020 • IFSC CODE-SBIN0001784

मनुवाद ने हमें दीन-हीन बना दिया

(उरई)

डी-एस4 के अध्यक्ष मा. कांशीराम जी के दो दिवसीय दौरे में जनपद जालौन में विभिन्न स्थानों पर विशाल जनसभाओं का आयोजन किया गया। प्रथम सभा जालौन तहसील के एक ग्राम गोहन में, 1 नवम्बर 1983 को प्रातः 10 बजे से 2 बजे तक हुई। सभा की अध्यक्षता सुघर सिंह राजपूत (गोहन) ने की।

(गोहन)

अपने आथित्य भाषण में मा. कांशीराम जी ने कहा, ''जो इन्सानियत में विश्वास रखते हैं वे तेजी से हमारे साथ जुड़ते जा रहे हैं यह हमारे लिए खुशी की बात है। दूसरी खुशी की बात यह है कि जिस तरह से मिशन को हम आगे बढ़ाना चाहते हैं उसी तरह से आप लोग आगे बढ़ा रहे हैं। मनुवाद ने हमें इतना दीन-हीन बना दिया है कि इतने दीन-हीन दुनिया में कहीं भी देखने को नहीं मिलते। दुख की बात यह है कि हम इस देश के मूलनिवासी हैं और हम अपने ही देश में मुठ्ठी भर लोगों के गुलाम बने हुए हैं। ऐसी स्थिति में हमें मनुवाद ने लगभग 6 हजार जातियों में बांट दिया है, और हमें इकट्ठे होना है। आपके जनपद में यह देखकर खुशी होती है कि सभी जातियों के लोग नजर आ रहे हैं।''

आगे आपने कहा, ''सारे देश में अपने लोगों का उत्साह एवं साहस देखकर मुझे 24 सितम्बर 1982 को पूना में मजबूर होकर कहना पड़ा कि जो लोग इस मूवमेंट को रोकना चाहते हैं वह रोक नहीं सकते। मुझे पूरी आशा है कि दलित-शोषित समाज का यह मिशन 2 साल के अन्दर इतना मजबूत हो जायेगा कि इस देश का कारोबार दलित-शोषित समाज की मर्जी के बिना कोई चला नहीं सकता।''

आधा भारत देश 15 अगस्त 1984 तक अन्याय-अत्याचार से मुक्त

दलित-शोषित जनता की समस्या को संख्या के अनुपात में स्पष्ट करते हुए आपने कहा कि दलित-शोषित समाज देश में लगभग 60 करोड़ है। इनको थोड़े समय में एक स्थान पर लाना बहुत बड़ी बात है। फिर भी मैंने 15 अगस्त 1983 से यह निश्चित किया है कि 15 अगस्त 1984 तक लगभग आधे देश को इतना मजबूत बनाना है कि उन पर कोई अन्याय करने की हिम्मत न कर सके। यह कार्य आप सबके सहयोग से हो सकता है।

आगे आपने कहा कि आपके साथ जो अन्याय होता है, उसका कारण आपकी कमजोरी है। हमें इस कमजोरी को दूर कर ताकत में बदलना है। हमारे बुजुर्गों की अथक कोशिश से बीमारी तो दूर हो चुकी है लेकिन कमजोरी रह गयी है। यह कमजोरी कोई दूसरा दूर नहीं करेगा। यह कार्य हमें ही स्वयं करना पड़ेगा। हमें दूसरे को दोषी न ठहराकर अपने को ही दोषी ठहराना है और अपनी कमजोरी दूर करना है।

सम्मेलन को डी.सी.वीरेन्दु ने भी सम्बोधित किया तथा शिवराम सिंह कुशवाहा ने आभार प्रकट किया।

(जालौन)

जालौन में आयोजित जनसभा में हजारों की संख्या में लोग उपस्थित थे सिद्धार्थ विद्यापीठ की छात्राओं ने स्वागत गीत गाकर सभा की कार्यवाही प्रारम्भ की।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि मा. कांशीराम जी थे। उन्होंने अपने आथित्य भाषण में कहा-''इतने बड़े समाज को संगठित करने के लिए एक मजबूत संगठन की जरूरत है और समाज को आगे बढ़ाने के लिए संघर्ष की त है।

जरूरत है, कामयाब संघर्ष के लिए हमने एक मजबूत संगठन की आवश्यकता समझी और डी-एस4 नाम से संगठन बनाया है। आज जैसा संगठन हम बनाना चाहते थे, वैसा बनता हुआ नजर आ रहा है। यह खुशी की बात है।

सभा की अध्यक्षता जंगबहादुर सिंह यादव (जालौन) ने की तथा रामनाथ सुमन, श्रीमती रामजीलाल तथा बब्बा संगीत पार्टी ने ओजस्वी गीत रखे। खेमराज सिंह, भन्ते आनन्द, माता प्रसाद जाटव व कनौजिया जी ने अपने विचार व्यक्त किये।

(कालपी)

2 नवम्बर, 1983 को दोपहर 2 बजे से सायं 5 बजे तक जालौन जिले में कस्बा कालपी में तीसरी सभा आयोजित की गयी जिसमें हजारों की संख्या में लोग उपस्थित हुए।

इस अवसर पर मा. कांशीराम जी ने अपने आथित्य भाषण में विस्तारपूर्वक डी-एस4 की विचारधारा की जानकारी दी तथा इस समाज पर अन्याय-अत्याचार क्यों होते हैं? इस सम्बन्ध में बताते हुए आपने कहा कि डी-एस4 इस अत्याचार का इलाज है।

जनसभा में रामनाथ सोनकर, होरीलाल, राजबहादुर प्रजापति ने अपने गीतों से सभा को प्रभावित किया। अमानुल्ला खाँ ने अपने ओजस्वी भाषण से जनसाधारण को प्रभावित किया। संचालन डी.सी.वीरेन्दु ने किया।

(बहुजन संगठन, वर्ष 4, अंक 32, 14 नवम्बर, 1983)

साभार :
मा. कांशीराम साहब के ऐतिहासिक भाषण खण्ड-2
पेज संख्या 222 से 224 तक
ए. आर. अकेला

परिमित वैधानिक राजतन्त्र का उदय

नवीन संविधान की रचना

जिस समय फ्रांस की जनता क्रान्ति द्वारा पुराने का अन्त कर रही थी, उस समय राष्ट्रीय महासभा देश के लिए नवीन शासन–विधान के निर्माण के कार्य में संलग्न थी। इसीलिये राष्ट्रीय महासभा का दूसरा नाम संविधान सभा भी पड़ गया। फ्रांस में पुरानी शासन पद्धति के अन्त के बाद नवीन शासन–विधान के निर्माण का कार्य अनिवार्य हो गया था, जिसके अनुसार देश में नवीन शासन का सूत्रपात्र किया जा सके। इस प्रकार देश में जो नवीन शासन–विधान बनकर तैयार हुआ, उसमें सर्वप्रथम जनता के मूलभूत अधिकारों की घोषणा की गयी थी। उसकी रूपरेखा इस प्रकार थी।

मानव अधिकारों की घोषणा

जैसा कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है कि नये संविधान की प्रस्तावना के रूप में ''मानव अधिकारों की घोषणा'' अगस्त 1789 में ही की जा चुकी थी। इस घोषणा में निम्नलिखित बातों का समावेश किया गया था।

''सब मनुष्य जन्म से स्वतंत्र और समान होते हैं। उनके अधिकार प्रकृतिदत्त होते हैं, राज्य द्वारा स्वीकृत नहीं।'' इस घोषणा का उद्देश्य मानवीय अधिकारों पर विशेष बल देकर जनता को अपनी सुरक्षा के प्रति सचेत बनाना था, जिसका क्रांति के पूर्व के शासन में कोई महत्व नहीं था। जनता के इन अधिकारों को और अधिक स्पष्ट किया गया, जिसके अनुसार यह कहा गया कि राज्य की शक्ति जनता की सामान्य इच्छा पर आधारित है तथा सरकार का उद्देश्य नागरिकों के मूलभूत अधिकारों को सुरक्षित रखना है। जनता ही अपनी इच्छा को कानून का रूप देती है और इसलिए देश के कानून–निर्माण में सहयोगी होना उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। देश के कानून सबसे लिए समान हों, इसकी गारन्टी देना राज्य का परम कर्त्तव्य है।

नागरिकों के इन मूलभूत अधिकारों की घोषणा फ्रांस के इतिहास के लिए सर्वथा नवीन बात थी। वह पुरानी शासन पद्धति के प्रति एक खुली चुनौती थी तथा देश में नवीन युग के आगमन की सूचक भी। इस प्रकार इस घोषणा ने जनता के अधिकारों के क्रमिक विकास का सूत्रपात्र किया। संविधान–निर्माताओं का यह ख्याल था कि ऐसा कर वे मानवता के इतिहास में एक नवीन अध्याय को जोड़कर परोक्ष रूप से सम्पूर्ण विश्व की अपार सेवा कर रहे हैं। वास्तव में उनका यह प्रयास सर्वथा मौलिक तथा स्तुत्य था। एक विद्वान ने मानवीय अधिकार संबंधी घोषणा की प्रशंसा करते हुए कहा है, ''इसमें पाँच–छः ऐसे मंत्र मिले हैं, जो गणित की प्रस्तावनाओं की भाँति तीखे स्वयंसत्य की भाँति सच्चे और ब्रह्म–दर्शन की भाँति आलोक–पूर्ण है।''

फ्रांस का नया संविधान

फ्रांस के इस नवीन संविधान का निर्माण अत्यन्त ही सावधानीपूर्वक किया गया था। यद्यपि इसकी रचना का आरम्भ सन् 1789 में ही हो गया था, परन्तु उसका अन्तिम स्वरूप सन् 1791 में ही बनकर तैयार हो सका था। इस प्रकार उसके निर्माण में लगभग दो वर्ष का समय लगा था। इस पर राजा की स्वीकृति भी का सर्वप्रथम लिखित संविधान था। इसके पूर्व फ्रांस में संविधान का कोई महत्व नहीं था, क्योंकि राजा की इच्छा ही वहाँ सब कुछ थी। इसका निर्माण जनता की माँग को ध्यान में रखते हुए अत्यन्त ही मार्यादित रूप में किया गया था।

शासन का नवीन स्वरूप

फ्रांस का यह नया संविधान दो प्रमुख सिद्धान्तों पर आधारित था–1. राज्य की प्रभुत्व शक्ति जनता में निहित है। 2. शक्ति का विकेन्द्रीकरण जिसके अनुसार व्यवस्थापन, कार्यपालिका तथा न्याय की शक्तियाँ अलग–अलग हाथों में रखी गयी। इन सिद्धान्तों के अनुसार देश के शासन में नया परिवर्तन प्रस्तुत किया गया, जो निम्नलिखित था –

राजा की वैधानिक स्थिति : नवीन शासन–विधान के अनुसार राजा की स्थिति को वैधानिक बना दिया गया। वह देश का शासक तो बना रहा, पर शासन उसकी स्वेच्छा पर आधारित न होकर जन–साधारण की इच्छा पर आश्रित हो गया। शासन का वैधानिक प्रधान होने के नाते उसे मंत्रियों की नियुक्ति एवं बर्खास्तगी का अधिकार तो दिया गया, पर ये मंत्री अपने कार्यों के लिए उसके प्रति जिम्मेदार न होकर विधान सभा के प्रति उत्तरदायी ठहराये गये।

इस प्रकार शासन के कर्णधार राजा के प्रभाव से अलग ही रहे। राजा को देश की सेना का मुखिया भी माना गया, पर उसे किसी विदेशी शक्ति से संधि करने या संधि–भंग करने का अधिकार नहीं दिया गया। इस प्रकार राजा वैधानिक प्रधान तो बना रहा, परन्तु वह अपने सारे पूर्व अधिकारों से वंचित हो गया। यह स्थिति फ्रांसीसी राजा के लिए सर्वथा नवीन थी, जिसके अनुसार जनता उसके अधिकारों की उपेक्षा कर सकती थी, परन्तु राजा जनइच्छा के समक्ष नत–मस्तक था। इस प्रकार राजा की पूर्व असीमित शक्ति सीमित हुई और देश में कानून की सत्ता प्रथम बार स्थापित हुई। यह फ्रांस में सीमित राजतंत्र का विकास था। जनता के हृदय में अब भी राजा के प्रति सम्मान था और इसी भावना के कारण ही उसके पद को आगे जाकर जनता ने उसे देश की स्वतंत्रता का उद्धारक भी घोषित किया। यह मानवीय स्वभाव के अनुरूप ही था। सदियों से चले आने वाले राजा के अस्तित्व और प्रभाव को एकाएक समाप्त नहीं किया जा सकता था, क्योंकि जनता का एक बड़ा वर्ग अभी भी राजा का भक्त था।

विधान सभा

नवीन शासन–विधान के अनुसार देश में प्रथम बार सही अर्थों में विधान सभा की स्थापना की गयी, जिसकी सदस्य–संख्या 745 रखी गयी और उसका कार्यकाल दो वर्षों के लिए नियत किया गया। इन सदस्यों को चुनने का अधिकार प्रत्येक बालिग पुरूष को, जिसकी एक निश्चित आय होती थी, दिया गया। विधान सभा जिसके अधिकार अत्यन्त व्यापक थे, के सारे देश के लिए कानून बनाने का दायित्य सौंपा गया। राजा का विधान सभा से कोई सम्बन्ध नहीं था। वास्तव में यह नवीन शासन–विधान की मुख्य विशेषण थी।

न्यायपालिका का पुनर्गठन

न्याय के क्षेत्र में भी अनेक परिवर्तन किये गए। नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत सभी पुराने न्यायालय तोड़ दिये गये और अनेक न्यायालय स्थापित किये गये। पेरिस में एक उच्च न्यायालय की व्यवस्था की गई। नई व्यवस्था का उद्देश्य समानता के आधार पर सब लोगों को निष्पक्ष न्याय प्रदान करना था। नागरिकों द्वारा न्यायाधीशों के निर्वाचन का प्रावधान किया गया और जूरी–प्रथा को भी आरम्भ किया गया। न्यायधीशों का कार्यकाल 2 से 4 वर्ष तक निश्चित किया गया।

प्रशासन का पुनर्गठन

सभा ने पुराने प्रान्तों एवं उनकी प्रशासनिक व्यवस्था को समाप्त कर दिया। उसके स्थान पर सम्पूर्ण देश को 83 डिपार्टमेन्ट (प्रान्तों) में विभक्त किया गया। प्रत्येक प्रान्त (डिपार्टमेन्ट) को जिलों में, जिले को केन्टानों (Cantons) में और कैन्टान को कम्यूनों या म्यूनिसिपैलिटियों में विभाजित कर दिया गया। इन सभी विभागों और उपविभागों का शासन निर्वाचित स्वशायी संस्थाओं को दिया गया।

राष्ट्रीय सभा के कार्य

फ्रांस की राष्ट्रीय सभा ने अपने असाधारण कार्यों के द्वारा देश में नवीन वातावरण का निर्माण किया। इन कार्यों का उद्देश्य देश में पुराने राजतंत्रीय युग को समाप्त कर लोकतन्त्र के आदर्शों के अनुरूप नवीन युग को स्थापित करना था।

सामन्तवादी तथा विशेषाधिकारों की समाप्ति : फ्रांस के सर्वसाधारण लोग सामन्तीय प्रथा की बुराइयों से अत्यधिक पीड़ित थे तथा उसकी समाप्ति में ही अपना कल्याण समझते थे। इसके सिवाय पादरी और कुलीनों के विशेषाधिकार उन्हें शूल की तरह चुभ रहे थे, क्योंकि वे देश में असमानता को जन्म देने वाले थे। इसी कारण देश का समाज ऊँच–नीच, कुलीन–अकुलीन और गरीब तथा अमीर की भावना से पीड़ित था। इसीलिए राष्ट्रीय सभा ने सर्वप्रथम इसी पर कुठाराघात किया। राष्ट्रीय सभा ने इस आशय का कानून बनाकर सामन्तवाद तथा विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया, ताकि सभी लोग स्वतन्त्रता तथा समानता का उपभोग कर सकें। अब सरकारी नौकरी का द्वार सबके लिए–योग्यता के आधार पर–खोल दिया गया। समानता के आधार पर समाज का नवीन संगठन किया गया और कानून के समक्ष सब लोग बराबर माने गये। कृषकों ने जमींदारों को नजराना देना बन्द कर दिया और उसके शिकार सम्बन्धी अधिकारों का अन्त हो गया। इस प्रकार सामन्तवाद की पूर्णाहुति देकर राष्ट्रीय सभा ने देश में नवीन शासन और समाज का सृजन किया, जिसकी नींव स्वतन्त्रता और समानता के सिद्धान्त पर रखी गयी। देश के स्वरूप में यह एक जबरदस्त परिवर्तन था।

चर्च का लौकिकीकरण : राष्ट्रीय सभा ने चर्च के एकाधिकार पर भी प्रहार किया, क्योंकि वह राजा की निरंकुशता में सबसे बड़ा सहायक था। फलतः उसके अधिकारों को कम करने के लिए सभा ने अनेक महत्वपूर्ण तथा साहसिक प्रस्तावों को पारित किया, जिसके कारण धार्मिक क्षेत्र में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया। अब राज्य की जनता को धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान की गयी और चर्च का दशमाँश वसूल करने का अधिकार समाप्त कर दिया गया। चर्च के अधिकार में अपार सम्पत्ति थी, जो 2 नवम्बर 1789 के अधिवेशन में पारित प्रस्ताव के अनुसार राष्ट्र की सम्पत्ति मान ली गयी। इसके सिवाय प्रत्येक प्रान्त में एक–एक मठ की स्थापना की गयी, जिसके अधिकारी निर्वाचित होने लगे। चुनाव के बाद प्रत्येक पादरी को देश के संविधान के प्रति निष्ठा की शपथ लेना अनिवार्य था। इन नवीन सुधारों के द्वारा चर्च के पुरातन स्वरूप में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया गया, जिसका उद्देश्य चर्च की प्रभुता को समाप्त कर उसे राज्य के अधीन रखना था। अब वह किसी वर्ग विशेष को वस्तु न रहकर सर्वसाधारण जनता के अधिकार की चीज हो गयी। दूसरे शब्दों में, उसका पूर्णरूपेण लौकिकीकरण हो गयी। यह परिवर्तन लोगों की धार्मिक रूचियों में संशोधन का परिचायक था।

आर्थिक कार्य : राष्ट्रीय सभा ने देश की आर्थिक दशा को सुदृढ़ तथा गतिशील बनाने का कार्य किया। हम इस बात से अवगत हैं कि क्रान्ति के पूर्व देश की आर्थिक स्थिति अत्यन्त गंभीर थी और इसीलिए वह क्रान्ति के विस्फोट का सबसे बड़ा कारण था। अतः इस ओर ध्यान देना अनिवार्य था। फिर देश की आर्थिक सुदृढ़ता के बिना शासन चलाना भी मुश्किल था। फलतः इस दिशा में भी अनेक सुधार किये गये। सर्वप्रथम राज्य में पत्र–मुद्रा प्रकाशित की गयी, जिससे मूल्यों को स्थिर रखने के लिए चर्च की सम्पत्ति अमानत के रूप में रखी गयी। परन्तु सभा को अपने इस उद्देश्य में सफलता नहीं मिली, क्योंकि सावधानी के बाद भी मूल्यों में गिरावट को नहीं रोका जा सका। मूल्यों की इस अस्थिरता ने देश में और भी अधिक आर्थिक समस्याओं को जन्म दिया। इस प्रकार राष्ट्रीय महासभा आर्थिक समस्या को सुलझाने में असमर्थ रही।

प्रशासकीय व्यवस्था : शासन के पुनर्सगंठन में मान्तेस्क्यू के सिद्धान्तों का पालन किया गया, जिसके अनुसार व्यवस्थापन, कार्यपालन तथा न्यायिक शक्तियों की अलग–अलग हाथों में केन्द्रित करने का प्रयास किया गया। इस प्रकार देश के इतिहास में शक्ति के विकेन्द्रीकरण की नीति का अनुसरण किया गया। फिर भी राजा के विशेष अधिकार को कायम रखा गया। यह व्यवस्थापिका द्वारा पारित किसी कानून को पास कराने में कुछ विलम्ब कर सकता था, परन्तु एक निश्चित अवधि के बाद कोई भी प्रस्ताव कानून बन सकता था, परन्तु एक निश्चित अवधि के बाद कोई भी प्रस्ताव कानून बन सकता था, चाहे उसे राजा की सहमति मिली हो अथवा नहीं।

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

इसके सिवाय राजा वैदेशिक मामलों में सम्बन्धित कुछ दायित्वों का भी निर्वाह करता था। वह विदेशों में राजपूतों की नियुक्ति करता था तथा दूसरे देशों से आये राजदूतों का सम्मान भी।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सभा ने जो नवीन सुधार किये, उसका प्रभाव अत्यन्त व्यापक तथा महत्वपूर्ण था। उसके द्वारा किये गये सुधारों का हर क्षेत्र पर प्रभाव पड़ा। इस प्रकार मौलिक सुधारों के द्वारा पुरानी व्यवस्था का अन्त कर दिया गया, और क्रान्ति के आदर्शों के अनुसार देश में नवीन व्यवस्था स्थापित की गई। सभा ने देश की पुरातन प्रचलित व्यवस्था को समाप्त करने में वही तत्परता दिखलायी और उसमें उसे सफलता भी मिली। परन्तु वह सफलता पर्याप्त न थी, क्योंकि उसके द्वारा स्वीकृत सिद्धान्त अत्यन्त ही ऊँचे और आदर्शमय थे तथा उन्हें व्यावहारिकता का रूप देना कठिन था। इसलिए उसके मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ आयी, जिनकी पुष्टि बाद की घटनाओं से होती है।

संविधान की समीक्षा

फ्रांस में राष्ट्रीय सभा के द्वारा जिस घोषणा–पत्र का प्रकाशन किया गया उसके प्रति व्यापक प्रतिक्रिया हुई। कुछ लोगों ने उसकी भूरि–भूरि प्रशंसा की तो कहीं उसकी तीव्र आलोचना भी हुई। जिन लोगों ने इसकी प्रशंसा की उनकी नजरों में घोषणा पत्र नवीन युग का सन्देशवाहक था। ऐसे लोगों ने उसे फ्रांस में गणतन्त्रीय शासन की शुरूआत का प्रतीक मानकर आधुनिक काल का धार्मिक ग्रन्थ भी चित्रित किया। प्रोफेसर हेजन के अनुसार –

''घोषणा पत्र के लेखकों की उक्ति कि यह घोषणा–पत्र विश्व के लिए एक शान्ति–दूत होगा, सत्य प्रतीत होती है। जहाँ कहीं भी मनुष्य मानव–अधिकारों की चर्चा करता है, उसके मन में फ्रांस का यह घोषणा–पत्र होता है। यह घोषणा अपनी उपयोगिता एवं प्रभाव के कारण देश की सीमा को लाँघ चुकी थी। पिछली शताब्दी में स्वतन्त्रता के इच्छुक अनेक राष्ट्रों ने अपने मौलिक सिद्धान्तों को फ्रांस की इस घोषणा में खोजा है।''

उक्त प्रशंसा के बावजूद, उसके कुछ दोष स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। जिन लोगों ने इसके निर्माण के कार्य में योगदान दिया था, वे प्रशासकीय कार्यों से अनभिज्ञ थे तथा उसके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त अव्यावहारिक प्रतीत होते थे। उन सिद्धान्तों की रचना करते समय उसके व्यवावहारिक पक्ष की कठिनाइयों की ओर ध्यान नहीं दिया था। उत्तेजनावश, उन्होंने बड़े–बड़े सिद्धान्तों को गढ़ लिया था। उनमें मिराबो ही एक ऐसा व्यक्ति था, जो इस कठिनाई को भली–भाँति जानता था और इसलिए उसने अन्य लोगों का ध्यान इस ओर आकृष्ट भी किया था। परन्तु मिराबो की इन बातों की ओर किसी ने गौर नहीं किया। मिराबो ने कहा था– ''ज्यादा अच्छा होता यदि मानव अधिकारों के स्थान पर घोषणा पत्र में नागरिक कर्त्तव्यों का विवरण होता।'' ऐसी स्थिति में घोषणा–पत्र की असफलता का अनुमान लगाना सहज ही था।

घोषणा–पत्र में अनेक ऐसे दोष विद्यमान थे, जिन्हे स्पष्ट नहीं किया गया था, या उस ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया था। यह स्वाभाविक प्रक्रिया है कि संविधान–निर्माता भावना के वशीभूत होकर संविधान की प्रस्तावना में उच्च आदर्शों को समाविष्ट कर लेते हैं और उसकी पेचीदगियों को वे उस समय समझ नहीं पाते। इसी तरह फ्रांस के घोषणा–पत्र में भी जनता के व्यक्तिगत अधिकारों का विशद वर्णन किया गया था, जिससे राष्ट्रीय हित पर आघात पहुँचने की संभावना थी। उसमें लोगों को व्यक्तिगत रूप से सम्पत्ति रखने का अधिकार दिया गया था, जिससे समाजवादी सिद्धान्तों की अवहेलना हो सकती थी।

नवीन व्यवस्था के अनुसार राजा की शक्ति को नियन्त्रित कर दिया गया। उसे कानून–निर्माण के अधिकार से एकाएक वंचित कर दिया गया और जिस विधान–सभा को देश के लिए कानून बनाने का अधिकार दिया गया, उससे राजा का कोई सम्बन्ध नहीं था। इस प्रकार देश राजा के प्रशासकीय अनुभाव के लाभ से सर्वथा वंचित हो गया। एकाएक यह परिवर्तन करके सैकड़ों वर्षों की परम्परा का परित्याग कर दिया गया। इससे देश की प्रशासकीय व्यवस्था में शिथिलता आने लगी, क्योंकि देश के अधिकांश नव–निर्वाचित कर्मचारी शासन के क्षेत्र में कोई अनुभव नहीं रखते थे। फलतः देश में अराजकता की स्थिति निर्मित होने लगी।

संविधान के निर्माता चर्च के शत्रु थे। फलतः उन्होंने उसके स्वरूप, अधिकार और संगठन में मौलिक तथा क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिया। चर्च की स्वतंत्र सत्ता समाप्त कर उसे राज्य के अधीन कर दिया गया। चर्च का नवीन संगठन दोष–पूर्ण था, जिसके अनुसार जनता को पादरियों के निर्वाचन का अधिकार दे दिया गया था। इस व्यवस्था के कारण ऐसे व्यक्तियों को पादरी पद के लिए चुन लिया जाना सम्भव था, जो अधार्मिक हों। बहुत सम्भव था कि ऐसे व्यक्ति जनता की धार्मिक भावनाओं से खिलवाड़ करने पर उतारू हो जाएँ। निर्वाचन के बाद प्रत्येक पादरी को नवीन संविधान के प्रति शपथ लेना अनिवार्य था। अधिकांश पादरियों ने ऐसा करने से इन्कार कर नवीन व्यवस्था के प्रति अपने असन्तोष को प्रकट किया। इनकी नकल दूसरों ने भी की, जिनके हितों को क्रान्ति के कारण आघात पहुँचा था। इस प्रकार असन्तुष्ट लोगों को, जिसकी संख्या देश में अधिक थी, क्रान्ति के खिलाफ खुलकर खेलने का अवसर प्राप्त हो गया। इन विरोधों के कारण संविधान की सफलता संदिग्ध ही हो गयी। परन्तु ऐसा होना स्वाभाविक था, क्योंकि क्रान्ति ने सामूहिक हित की बात को ध्यान में रखकर कार्य किया था। इसके कारण उन लोगों के हितों पर कुठाराघात हुआ था, जो क्रान्ति के पूर्व समाज में विशिष्ट एवं अनेक अधिकारों से युक्त स्थान रखते थे। अतः क्रान्ति के पूर्व समाज में विशिष्ट एवं अनेक अधिकारों से युक्त स्थान रखते थे। अतः क्रांन्ति के द्वारा उनकी विशिष्टता और अधिकारों का जब अन्त किया गया तब उससे उनका नाराज होना स्वाभाविक बात थी। बहुजन हिताय के सिद्धान्त पर देश के नवनिर्माण में कुछ लोगों की नाराजगी पर ध्यान देना असम्भव होता है। अतः उनकी नाराजगी की चिन्ता न कर राष्ट्रीय सभा ने जो कार्य किया, वह अनिवार्य एवं स्तुत्य था।

इस प्रकार कुछ दोषों के बावजूद देश का नवीन संविधान महत्वपूर्ण था, क्योंकि उसने प्रथम बार समानता के सिद्धान्त के अनुसार नवीन समाज की रचना की और राजा की निरंकुशता को समाप्त कर उसे जन–इच्छा के अनुरूप शासन करने को बाध्य किया। अतः निश्चय ही उसने अपने कार्यों के द्वारा देश में नवयुग का सूत्रपात किया। प्रोफेसर हेज के अनुसार –

''फ्रान्स में जो कुछ हो रहा था वह क्षणिक पागलपन का परिणाम न था, वरन् उसके पीछे जनता का स्पष्ट समर्थन था। यह नवीन परिवर्तन केवल संविधान द्वारा सम्पन्न नहीं हुआ, वरन जनता तथा राष्ट्र की शक्तिशाली इच्छा के कारण ही सम्भव हो सका। क्रान्ति से देश में एक नवीन राजनैतिक, सामाजिक, व्यक्तिवादी जनतन्त्रीय तथा राष्ट्रीय राज्य का जन्म हुआ।''

राष्ट्रीय महासभा के कार्यों के खिलाफ प्रतिक्रिया

राष्ट्रीय महासभा जिस प्रकार फ्रान्स में नवीन क्रांतिकारी परिवर्तन ला रही थी, उससे देश में चारों ओर एक प्रकार हलचल–सी मच गयी। सदियों से चली आने वाली सामन्त–पद्धति तथा कुलीन एवं पादरी वर्ग के विशेषाधिकारों का अन्त उसने जिस तत्परता से किया, उससे अभिजात्य वर्ग में गहन असन्तोष फैल गया। इन विरोधों की चिन्ता न कर सभा देश के नव–निर्माण कार्य में तत्परता से लगी रही। परन्तु पुराने जमाने की इतनी सरलता एवं शीघ्रता के साथ समाप्त नहीं किया जा सकता था, क्योंकि देश में उसकी जड़ें अत्यन्त गहरी एवं पुरानी थीं। इस व्यवस्था से जो लोग प्रभावित हुये थे वे उसे पलटने के लिए जी–जान से जुट गये तथा वे उसके खिलाफ उग्र उप रूप से षड़यन्त्र करने लगे। राष्ट्रीय सभा को केवल आंतरिक विरोध का ही सामना नहीं करना पड़ा, वरन उसे बाह्य चुनौतियाँ भी झेलनी पड़ीं। इस प्रकार क्रान्ति के खिलाफ देश के अन्दर तथा बाहर भीषण प्रति–क्रियाएँ होने लगी। अभिजात्य वर्ग के लोग राजा को देश में निर्मित नवीन व्यवस्था को कुचलने की प्रेरणा देते रहे। राजा भी व्यक्तिगत रूप से इस दिशा में प्रयत्नशील था।

क्रान्ति के फलस्वरूप देश का शासन टूटकर बिखर गया था और चारों ओर अशान्ति फैलने लगी थी। असुन्तुष्ट लोगों ने इससे लाभ उठाने का प्रयास किया तथा उन्होंने इसके लिए क्रान्ति को ही जिम्मेदार ठहराया। चर्च को अपना नया स्वरूप नापसन्द था, इसलिए शुरू से ही उसका रूख क्रान्ति की ओर विद्रोहात्मक था। पत्र–मुद्रा के मूल्यों में अस्थिरता के कारण देश का व्यापार अनिश्चित हो गया, जिससे देश की आर्थिक दशा बिगड़ने लगी। शासन में आरूढ़ अनुभवहीन व्यक्तियों के कारण देश की राजनैतिक स्थिति डाँवाडोल होने लगी। लोगों में इससे उकताहट होने लगी, और वे अत्यन्त व्यग्रता से यह चाहने लगे कि शासन में स्थिरता आये। नवीन संविधान–सभा के प्रति भी लोगों का विश्वास कम होने लगा, क्योंकि उसके सदस्य अपने उत्तरदायित्व से च्युत हो आपसी वैचारिक संघर्ष में लिप्त हो गये थे। सभा के कार्यों में जेकोबे दल का प्रभाव बढ़ने लगा था, जिससे वातावरण में उग्रता का संचार होने लगा। इस प्रकार संक्रमणकाल में जहाँ एक ओर देश की आन्तरिक स्थिति विस्फोटक होती चली गई, वहीं दूसरी ओर बाहरी विपत्ति के बादल भी मंडराने लगे।

इसका कारण यह था कि यूरोप के दूसरे राज्य फ्रांस की क्रान्ति को अच्छी निगाह से नहीं देखते थे। उन्हें इस बात का भय हो गया था कि कहीं उनके राज्य की जनता भी फ्रान्स का अनुकरण कर उनके शासन के खिलाफ विद्रोह न कर दें। ऐसे देश फ्रान्स के खिलाफ सैनिक कार्यवाही कर क्रान्ति की भावना को कुचलने का प्रयास करने लगे। फलस्वरूप बाह्य युद्धों की प्रबल सम्भावना होने लगी, जिससे क्रान्तिकारियों के समक्ष गम्भीर संकट उत्पन्न हो गया। यद्यपि क्रान्तिकारियों के लिये विद्यमान समस्याएँ अत्यन्त ही गम्भीर थीं, तथापि शायद वे उसका सामना करने में समर्थ हो जाते–यदि उन्हें मिराबों का नेतृत्व प्राप्त होता। परन्तु इसी समय उसकी मृत्यु ने उन्हें जबरदस्त आघात पहुँचाया। यह एक ऐसा धक्का था, जिसे क्रान्तिकारी विद्यमान परिस्थिति में कभी भी नहीं भूल सकते थे। उनके लिए यह एक अपूरणीय क्षति थी। उसकी मृत्यु ने उन्हें कुछ समय के लिए बिल्कुल असहाय और विकर्त्तव्यविमूढ़ कर दिया।

मिराबो (1749–1971) : इस समय फ्रांस भयानक संकट के दौर से गुजर रहा था। बाह्य युद्धों की सम्भावना अत्यन्त ही प्रबल हो चुकी थी। विद्यमान परिस्थितियाँ इस बात का संतेत दे रही थीं कि देश किसी भावी संकट में फँसने वाला है। क्रान्तिकारी नेता विचलित होने लगे थे। देश को भावी संकट से उबारने की क्षमता यदि किसी नेता में थी तो वह मिराबो में ही थी। वह अपने समय का अत्यन्त कुशल और दक्ष राजनीतिज्ञ था, परन्तु इसी बीच उसकी मृत्यु ने देश को बीच भंवर में फँसा दिया।

मिराबो का जन्म कुलीन परिवार में हुआ था। देश की राजनीति से उसका गहरा सम्बन्ध था तथा अपने राजनीति विचारों के कारण वह जनता का लोकप्रिय नेता बन गया। राजनीतिक उथल–पुथल की कला को समझने में वह देश का पहला नेता था, जो किसी विशिष्ट राजनीतिक आदर्श की अपेक्षा उसकी व्यावहारिका पर बल देता था, क्योंकि उसे राजनीति के व्यावहारिका पहलू का ठोस ज्ञान था। जिस राष्ट्रीय सभा ने देश के लिए नवीन संविधान का निर्माण किया, उनमें मिराबो का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान था। देश की परम्पराओं के प्रति उसकी गहरी आस्था थी। वह सीमित राजतन्त्र का समर्थक तथा एकतन्त्र निरंकुश शासन का विरोधी था।

वह स्वभाव से शान्त तथा विचारवान व्यक्ति था। विचारों में उग्रता उसके स्वभाव के विपरीत बात थी। वह राष्ट्रीय विधान को प्राथमिकता देकर उसके अनुकूल आचारण करने की बात पर विश्वास करता था, क्योंकि उसकी यह मान्यता थी कि ''शासन के निर्बल हो जाने से देश में अराजकता फैलती है''। लुई सोलहवाँ उसके विचारों से अत्यन्त प्रभावित था तथा मिराबो के मन में भी उसके प्रति उचित सम्मान था। यही कारण था कि वह राजा को संवैधानिक मार्ग पर चल कर क्रांति का नेतृत्व करने की प्रेरणा देता रहा। परन्तु दरबारियों के प्रभाव के कारण वह राजा को प्रभावित करने में सफल न हो सका,

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

जिसका दुष्परिणाम राजा को शीघ्र ही भुगतना पड़ा।

वह जकोबे दल का, जो फ्रांस की राजनीतिक में विशेष महत्व रखता था, सभापति हो गया। इसके बाद जनवरी, 1791 में वह राष्ट्रीय महासभा का भी सभापति बनाया गया। इस प्रकार वह व्यक्तिगत विशेषता के कारण शीघ्र ही देश का कर्णधार बन गया, परन्तु प्रतिकूल परिस्थिति के कारण वह आशातीत सफलता न प्राप्त कर सका। अप्रैल, 1791 में उसका देहावसान हो गया और उसके साथ ही देश में एकतंत्र की रक्षा की आशा धूमिल हो गई। एक इतिहासकार के अनुसार ''यदि मिराबो कुछ समय के लिए और जीवित रहता तो शायद फ्रांस का भाग्य ही कुछ दूसरा होता। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि क्रान्ति ने जितने आदमी उत्पन्न किये थे, उनमें वह अग्रणी था। यदि वह रहता तो एकतंत्र की रक्षा करने में समर्थ हो जाता और क्रांति को संवैधानिक मार्ग पर आगे बढ़ा ले जाता।''

इस प्रकार मिराबो का व्यक्तित्व अत्यन्त ही प्रभावशाली था तथा देश में उसकी राजनैतिक पकड़ अद्वितीय थी। वह अग्रसोची तथा पटु राजनीतिज्ञ था। उसका एकमात्र सिद्धांत निरंकुश शासन के खण्डहर पर प्रतिनिधि राजतंत्र की स्थापना करना था। फ्रांस का नवीन शासन–विधान बहुत अंशों में उसकी ही रचना थी। वह किसी पार्टी विशेष में सम्बन्धित न होकर, देश का सर्वमान्य नेता था।

राजा के पलायन का विफल प्रयास (जून 1791)

फ्रांस की परिवर्तित दशा में राजा को यह आभास होने लगा था कि उसकी पूर्व प्रतिष्ठा समाप्त हो गयी है और स्वतन्त्रता भी दिन–प्रतिदिन सीमित होती जा रही है। रानी और कुछ शुभेच्छू कुलीन भी बहुत समय से देश छोड़ कर जाने की योजनायें बना रहे थे। मिराबो की मृत्यु से उसे गहरी निराशा हुई। पादरियों के नये संविधान को स्वीकार करने में उसे अत्यधिक आत्मग्लानि हुई। ऐसी हीन दशा में फ्रान्स में बने रहने की अपेक्षा उसने देश के बाहर भाग जाना श्रेयस्कर समझा। इसी निश्चय के अनुसार 20 जून 1791 को रात्रि के समय राजा, रानी ओर राज कुमार वेष बदलकर मत्स की ओर चल पड़े। राजपरिवार की बन्द घोड़ागाड़ी किसी प्रकार बचती हुई वेरेनीज नामक स्थान तक सुरक्षित पहुँच गयी। वहाँ से सीमा केवल 20 मील दूर रह गयी थी। परन्तु दुर्भाग्य से उसी समय एक व्यक्ति ने उन्हें पहचान लिया और उन्हें रोक लिया गया। तत्पश्चात राजा और रानी को अपमानित करके बिना विश्राम के पेरिस वापिस लाया गया। राजपरिवार पुनः त्यूलरीज के महल में कैद हो गया।

विफल पलायन का प्रभाव : इस दुर्भाग्यपूर्ण असफल पलायन के बड़े गम्भीर परिणाम हुए। उसका तात्कालिक परिणाम तो यह हुआ कि जनता के मन में राजा के प्रति जो भक्ति एवं विश्वास था, वह समाप्त प्रायः हो गया। बहुत से लोग यह सोचने लगे कि राजा वास्तव में क्रान्ति का विरोधी था। अभी तक फ्रांस में गणतंत्र की चर्चा तक नहीं थी। किन्तु इस प्रयत्न के फलस्वरूप एक गणतन्त्रवादी दल का उदय हुआ। किन्तु यह गणतन्त्रीय दल अभी अधिक प्रभावशाली नहीं था। संविधान सभा के सदस्यों का बहुमत अभी भी राजतंत्र को बनाये रखना चाहता था तथापि पेरिस की उत्तेजित जनता को शान्त करने के लिए राजा को कुछ समय के लिए मुअत्तिल कर दिया गया।

उग्रकांतिकारी इस निर्णय से संतुष्ट नहीं थे। अतः उन्होंने पेरिस में शांदमार (Champde Mars) नामक स्थान पर एक विशाल जनसभा का आयोजन किया, जिसमें गणतंत्र की माँग का समर्थन किया जाता था। परन्तु राष्ट्रीय रक्षक दल ने गोली चलाकर सभा को भंग कर दिया। परन्तु शांदमार के हत्याकांड ने गणतन्त्रवाद की जड़ों को और मजबूत बना दिया। 1792 का गणतन्त्र राजा के पलायन का ही परिणाम था।

राजा के पलायन का एक परिणाम यह भी हुआ कि विदेशी राजशक्तियाँ यह समझने लगीं कि लुई फ्रांस की सभा का कैदी है। इस घटना ने विदेशी हस्तक्षेप की संभावना को निकट ला दिया।

संविधान सभा का विर्सजन

साभार :
यूरोप का इतिहास
पेज संख्या 109 से 120 तक
डॉ० भगवान सिंह वर्मा

इन्सानियत की जिन्दगी जीने के लिए बुद्ध धम्म की आवश्यकता–कांशीराम

(नागपुर)

''हजारों वर्षों से इस देश का दलित–शोषित समाज ब्राह्मणवादी समाज व्यवस्था का शिकार है। इस पीड़ित समाज को समानता का दर्जा देने के लिए, स्वाभिमान के साथ जीने के लिए, बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने बुद्ध धम्म का रास्ता 14 अक्टूबर 1956 में अपनाया। उनके महापरिनिर्वाण के पश्चात बाबा साहब द्वारा प्रारम्भ की गई धम्म–क्रांति को उनके सहयोगी सही दिशा में बढ़ा नहीं सके और आज भी उनका वह सपना अधूरा ही रह गया है। हम समझते हैं कि इस दिशा में कार्य करना हमारा कर्त्तव्य बन जाता है। इसीलिए हमारे पास उपलब्ध सभी साधनों का इस्तेमाल कर हमें विशाल संघ का निर्माण करना है। इस संघ–शक्ति के आधार पर हम जो चाहेंगे वह प्राप्त कर पायेंगे। इसी संघ–शक्ति के आधार पर हम दलित–शोषित समाज को समता और स्वाभिमान के साथ जीने का माहौल निर्माण कर पाएंगे।''

उपरोक्त विचार बुद्धिस्ट रिसर्च सेन्टर के संस्थापक मा. कांशीराम जी ने बी.आर.सी. द्वारा 1 जनवरी 1984 को 'अम्बाझरी गार्डन सांस्कृतिक भवन' के मैदान में उपस्थित बौद्ध धर्मीय जनता को सम्बोधित करते हुए प्रकट किये।

धम्म क्रान्ति के सम्बन्ध में आगे बोलते हुए मा. कांशीराम जी ने कहा कि सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े जनसमुदाय की प्रगति के लिए बाबा साहब ने बुद्ध धम्म की दीक्षा दी। परन्तु धर्म परिवर्तन के 53 दिन के भीतर ही उनका परिनिर्वाण हुआ और उनके द्वारा शुरू की गई धम्म क्रान्ति जिस तरह से आगे बढ़नी चाहिए थी बढ़ नहीं सकी। उनकी इस धम्म क्रान्ति को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी उनके अनुयाइयों की थी। परन्तु निजी स्वार्थ के कारण वे भी इस धम्म क्रान्ति को आगे बढ़ा नहीं सके।

आगे आपने कहा–1975 में इसी स्थान पर 'बौद्ध शिखर परिषद' का आयोजन किया गया था, जो 1956 की धम्म क्रान्ति के 18–19 वर्ष बाद का प्रयास था। इस परिषद में देश के कोने–कोने से बौद्ध धर्मीय नेतागण आये थे। विशाल स्तर पर आयोजित इस परिषद ने बौद्ध धर्मीय जनता में आशा की एक नई ज्योति प्रज्वलित की थी। परन्तु आज 8 वर्ष के पश्चात भी धम्म–प्रसार की दृष्टि से कोई प्रगति नजर नहीं आ रही है। इसीलिए फिर 8 वर्ष के पश्चात हम यहाँ इकट्ठे हुये हैं।

धम्म दीक्षा सम्मेलन की वर्षगांठ के सम्बन्ध में बोलते हुए कांशीराम जी ने कहा कि जब हम धम्म दीक्षा की 25वीं वर्षगांठ मना रहे थे, मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा जिसमें दलितों द्वारा मुस्लिम धर्म में धर्म परिवर्तन की खबरें छपती थीं। इतना ही नहीं बल्कि मैंने यहाँ तक सुना कि नागपुर के करीब ही एक देहात में एक बौद्ध धर्मीय परिवार मुस्लिम धर्म में प्रवेश करने वाला था, और विशेष यह कि यह धर्म परिवर्तन का कार्यक्रम बाबा साहब के महापरिनिर्वाण दिवस के अवसर पर नियोजित था और विशेष आश्चर्य देने वाली बात यह थी कि इसे प्रोत्साहित करने में हमारे नेता ही आगे थे। इस बात का मुझे काफी दुख हुआ। मैं यह महसूस करने लगा कि इस दिशा में हमें कुछ करना होगा। इसी दृष्टिकोण को सामने रख हमने 2 वर्ष पूर्व दिल्ली में बुद्धिस्ट रिसर्च सेन्टर की स्थापना की।

वर्तमान धार्मिक संस्थाओं की ओर इशारा करते हुए आपने कहा कि अगर वर्तमान धार्मिक संस्थाओं ने यह कार्य किया होता तो हमें नई संस्था बनाने की आवश्यकता महसूस नहीं हुई होती। परन्तु मजबूर होकर हमें बी.आर.सी. का निर्माण करना पड़ा। मुझे मालूम है, नई संस्था का निर्माण यानि संघ शक्ति का विघटन। परन्तु बाबा साहब की धम्म क्रान्ति को सही दिशा और गति नहीं मिलने से हमें नई संस्था के माध्यम से इस कार्य को अपने हाथ में लेना पड़ा।

आगे अपनी भूमिका अधिक स्पष्ट करते हुए मा. कांशीराम जी ने कहा–बामसेफ, डी–एस4, राजनीति आदि कई फ्रन्ट पर मेरे कार्यरत रहने पर कई लोगों ने यह शंका प्रकट की कि मैं धार्मिक आन्दोलन का विरोधी हूँ। परन्तु मेरी यह धारणा थी कि जब हमारे कुछ नेतागण इस कार्य में जुटे हुए हैं तब मुझे इस कार्य में पढ़ने की जरूरत नहीं होगी। परन्तु जब देखा कि यह कार्य जिस तरह चलना चाहिए उस तरह चल नहीं रहा और इसलिए फिर मुझे इधर भी ध्यान देने के लिए मजबूर होना पड़ा।

जब मैं कुछ करने के लिये आगे बढ़ता हूँ तब हमारे अपने लोग ही किस तरह रास्ते में रोड़े अटकाते हैं, यह कहते हुए आपके कहा कि अगर वे स्वयम् कुछ नहीं कर सकते, तब कम से कम हमें तो समाज के लिये कुछ करने दें और हमारे रास्ते में रोड़े न अटकायें।

अन्त में आपने कहा कि अगर आज भी ये नेता और संगठन धम्म क्रान्ति को आगे बढ़ाने में अपनी जिम्मेदारी समझते हैं, और आगे बढ़ते हैं तो हम उन्हें हर तरह का सहयोग देने के लिये तैयार हैं, और अगर वे ऐसा करने से हिचकिचाते हैं तो इससे जितना बन पायेगा, हम करेंगे। लेकिन हम जो करेंगे उसकी जानकारी हर माह जनता को देते रहेंगे।

नागपुर की जनता को धन्यवाद देते हुए आपने कहा कि इन तीन दिन के परिसंवाद के दौरान नागपुवासी बौद्ध धर्मीय जनता ने जो सहयोग दिया और बाहर से आये अतिथिगण के प्रति जो आत्मीयता दर्शाई इसके लिये मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ और आगे भी यह सहयोग और प्रेम हमें मिलता रहेगा ऐसी अपेक्षा करता हूँ।

जनसभा को डा. भदन्त आनन्द कौसल्यायन (नागपुर), स्नेह कुमार चकमा (अगरतल्ला, त्रिपुर), आर.डी. सुमन (नई दिल्ली), अनागरिका संघमित्रा (नासिक), भन्ते धम्म दीप (उत्तर प्रदेश), एड.पी.एस. धनवे (नांदेड़), के अलावा प्रो. अरूण चौधरी (दिल्ली), भन्ते शीलभद्र (इटावा), भन्ते बुद्ध शरण (फिरोजाबाद), प्रा. परमे राव (हैदराबाद) आदि ने सम्बोधित किया। भदन्त आनन्द कौसल्यायन ने उपस्थित बौद्ध समुदाय को पंचशील और त्रिशरण ग्रहण करवाया। कार्यक्रम का संचालन पंडित राव सोनोने ने किया तथा आभार प्रदर्शन एस.के.पाटिल ने किया।

(बहुजन संगठक, वर्ष 4, अंक 45, 13 फरवरी, 1984)

साभार :
मा. कांशीराम साहब
के ऐतिहासिक भाषण खण्ड–2
पेज संख्या 259 से 261 तक
ए. आर. अकेला

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

कुशल बनो। उत्पादन करो।। अधिकारों के लिए संघर्ष को तैयार रहो।।।

मानवता को वापस भुगतान करें
Pay back to humanity
कुछ भी संभव है
अगर आपको खुद पर विश्वास है

रक्षा और विभिन्न नागरिक कर्मचारी महासंघ ट्रस्ट

Defence And Multiple Civilian Employee Federation Trust

पंजीयन सं० 34 दिनांक 18/10/2023

भारतीय न्यास अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत

कार्यक्षेत्र समस्त भारत

–: पंजीकृत कार्यालय –

ग्राम व पोस्ट – रिवई (सुनैचा)
थाना – कबरई, जिला महोबा (उ० प्र०)
मो०: **7839007418**
E-mail : damceftrust@gmail.com
Website : www.dbindia.org.in

–: प्रदेश कार्यालय उत्तर प्रदेश :–

म० न० 50B, तुलसी नगर
नियर पी० ए० सी० गेट
श्याम नगर, कानपुर (उ० प्र०)
मो०: **9506623779**

प्रदेश प्रभारी

बीरबल वर्मा

मो०: **9936429765**

लक्ष्य – रक्षा और विभिन्न नागरिक कर्मचारियों और अधिकारियों की समस्याओं से भारत सरकार एवं सभी सम्बन्धित राज्य सरकारों विभागों को अवगत कराना और उनके निराकरण हेतु कानून बनवाने आदि की मांग करना।
रक्षा और विभिन्न नागरिक कर्मचारियों और अधिकारियों के सहयोग से वंचित, पीड़ित, शोषित प्राणियों के कल्याण हेतु शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने हेतु तत्पर रहना।
शिक्षा – निःशुल्क शिक्षा हेतु भारत के प्रत्येक जिले में विभिन्न स्तर की शिक्षण संस्थाओं की स्थापना और संचालन करना।
स्वास्थ्य – चिकित्सा सेवाएं निःशुल्क प्रदान करवाना और चिकित्सालयों की स्थापना करना।
सामाजिक सुरक्षा – व्यक्तियों के संकट के समय, जन्म, मृत्यु या विवाह में होने वाले अतिरिक्त व्यय की पूर्ति के लिए लाभ प्रदान करना है।
रक्षा – रक्षा में लगे कर्मचारियों व उनके परिवार से है।
और – सभी
विभिन्न नागरिक कर्मचारी – संगठित और असंगठित क्षेत्र में कार्यरत कार्मकारों से हैं।
(सशस्त्र बलों में कार्यरत कर्मचारियों को छोड़कर)
महासंघ – भारत के नागरिकों का संगठन से है।
ट्रस्ट – विश्वास/भरोसा है।

उस संगठन को दान दें
जिस पर आप विश्वास करते हैं
Make Donations to
an Organization You Believe In

–: उद्देश्य :–

- लक्ष्य की पूर्ति हेतु पूर्ण कालिक कार्यकर्ताओं की नियुक्त करना आदि।
- संचालित शिक्षण/प्रशिक्षण संस्थाओं में गरीब बच्चों को शिक्षण हेतु प्रवेश दिलाना और उनका खर्च वाहन करना।
- रोजगार के सृजन के लिए औद्योगिक इकाइयों की स्थापना/संचालन करना आदि।
- भारतीय संविधान निर्माता बाबा साहब डा० अम्बेडकर के विचारों के प्रचार–प्रसार के लिए कार्य करने वाले नागरिकों को ''डा० अम्बेडकर विचार प्रचार रत्न'' से सम्मानित किया जाना।
- प्राकृतिक चिकित्सा और योग के प्रचार–प्रसार के लिए कार्य करना आदि।

अतः आप सभी भारत के नागरिकों से अपील है कि तन, मन, से सहयोग प्रदान करने का कष्ट करें।

निवेदक –

सियाराम

राष्ट्रीय संयोजक/न्यासी, **मो०: 9454923394**

अनिल कुमार
राष्ट्रीय संयोजक (सार्वजनिक क्षेत्र के रक्षा उपक्रम)
मो०: 8593630338, 07897757223
श्रीमती उमेश्वरी देवी
राष्ट्रीय संयोजक (मुद्रण एवं संचार)
मो०: 9005204074, 8756157631
मनोज कुमार
राष्ट्रीय संयोजक (बेसिक शिक्षा विभाग)
मो०: 8787010365
पंकज कुमार
राष्ट्रीय संयोजक (माध्यमिक शिक्षा विभाग)
मो०: 7906006187
लेखचन्द्र गुप्ता
राष्ट्रीय संयोजक (खेल)
मो०: 9235728318
अजय कुमार
राष्ट्रीय संयोजक (राज्य कर्मचारी)
मो०: 7007822504
महिपाल
राष्ट्रीय संयोजक (भारतीय जीवन बीमा निगम)
मो०: 9935456466
जगदीश प्रसाद दिनकर
राष्ट्रीय संयोजक (हथकरधा विभाग)
मो०: 9455593651
विवेक कुमार
राष्ट्रीय संयोजक (सामाजिक संगठन)
मो०: 9616961612
श्रीमती सविता
राष्ट्रीय संयोजक (असंगठित क्षेत्र)
मो०: 8400430633
कु० ललिता
राष्ट्रीय संयोजक (महिला विभाग)
मो०: 7985811410
आशीष कुशवाहा
राष्ट्रीय संयोजक (अनुशिक्षण)
मो०: 8318038232
डा० अति दीपादन
राष्ट्रीय संयोजक (स्मारक एवं पार्क कर्मचारी)
मो०: 7269887945, 9258704062
विवेक कुमार चौधरी
राष्ट्रीय संयोजक (आयुध निर्माणियाँ अस्पताल)
मो०: 96969778910
महेश चन्द्र अहिरवार
राष्ट्रीय प्रवक्ता
मो०: 6388370835, 9956845323
विनोद कुमार
राष्ट्रीय संयोजक (संविदा एवं व्यापार)
मो०: 9935783705

–: राज्य कार्यालय छत्तीसगढ़ :–

वार्ड नं० 35 दुर्गा नगर
नियर नगर पालिका निगम कार्यालय के पास
जिला रायपुर
श्रीमती रमा गजभिये
राष्ट्रीय संयोजक (छत्तीसगढ़/महाराष्ट्र)
मो०: 7828273934
आयुष गजभिये
राज्य प्रभारी
मो०: 9131112561
राजबहादुर अहिरवार (बस्तर)
राज्य सहप्रभारी
मो०: 620306631

–: राज्य कार्यालय राजस्थान :–

जी–19, नियर आटो स्टैण्ड
खुदानपुरी, जिला – अलवर
ताराचन्द
राज्य प्रभारी
मो०: 8504063363

–: पूर्वोत्तर राज्य कार्यालय असम :–

ग्राम – चिपरसंगम पार्ट–1
पो० – अलगापुर जिला – हैलाकांदी
बिलालुद्दीन चौधरी
प्रभारी पूर्वोत्तर राज्य
मो०: 9401027750
भवानी बूढ़ा ठोकी
प्रभारी असम राज्य
मो०: 6000539663
हरीनाथ चौहान
राष्ट्रीय संयोजन (असम & बिहार राज्य)
मो०: 6000380690
रितुदास
राष्ट्रीय संयोजक (असम & पं० बंगाल राज्य)
मो०: 8638349801

–: प्रभारी हरियाणा राज्य :–

देवेन्द्र सहरावत
मो०: 9068831086

–: प्रभारी बिहार राज्य :–

अनिलदास # 9651217573
रामप्यार साह # 6263491099

–: प्रभारी म० प्र० राज्य :–

महेन्द्र तुरकर
प्रदेश प्रभारी
मो०: 8878372412
पुष्पेन्द्र अहिरवार
प्रदेश प्रभारी
मो०: 9669376505
रमाशंकर
प्रदेश प्रभारी उ० प्र० (बेसिक शिक्षिक)
मो०: 9450850778
ईश्वरी प्रसाद
राज्य संयोजक उ० प्र० (भारतीय जीवन बीमा निगम)
मो०: 9794366838
रामसिंह
मण्डल संयोजक झांसी
मो०: 9616838281, 6392558232
अनिल कुमार
मण्डल प्रभारी कानपुर
मो०: 9198414002
सुनील कुमार
मण्डल संयोजक वाराणासी
मो०: 9935363730, 9170836363
दातादीन
मण्डल संयोजक लखनऊ
मो०: 8115511006
सुनील कुमार
मण्डल संयोजक प्रयागराज
मो०: 8948990184
सुभाष चन्द्र
मण्डल संयोजक प्रयागराज
मो०: 8303995957
सुभाष कुमार
मण्डल संयोजक कानपुर
मो०: 9695931879
राकेश कुमार
जिला प्रभारी इटावा
मो०: 8009802461

पदाधिकारी बनने के लिए सम्पर्क करें – 9454923394

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

संत रविदास का दर्शन

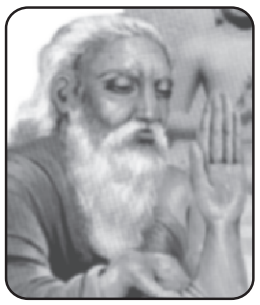

ब्राह्मणवाद के चिर–परिचित शत्रु बौद्ध धर्म का गुरु रविदास जी पर गहरा प्रभाव था। उन्होंने बौद्ध मत का ही जन भाषा में प्रचार किया। यही वजह है कि उन्होंने अपने समय के कट्टर ब्राह्मणों को शीघ्र ही अपना शत्रु बना लिया। यही शत्रुता बाद में गुरु जी की हत्या का सबब भी बनी। गुरुजी की वाणी में उपलब्ध बौद्ध तत्वों का अध्ययन हम बाद में करेंगे, पहले यह देखना जरूरी है कि बौद्ध धर्म समय की शिला पर घिसता हुआ तथा ब्राह्मण धर्म के क्रूर खूनी पंजों से लुटता–पिटता किस रूप में गुरु रविदास जी तक पहुंचा। आइए देखते हैं इतिहास के झरोखे से।

भद्रशील रावत जी लिखते हैं कि "भारत का इतिहास बताता है कि श्रमण संस्कृति के पुरोधा महावीर स्वामी और भगवान बुद्ध के सामने त्याग–तपस्या के क्षेत्र में सभी ब्राह्मण संस्कृति के अनुयायी बौने साबित हुए हैं। देश, काल एवं परिस्थिति के अनुसार बौद्ध धर्म हीनयान एवं महायान में विभाजित हुआ। आगे चलकर महायान भी वज्रयान, मंत्रयान एवं सहजयान में विभाजित हुआ। सहजयान के पुरोधा चौरासी सिद्ध थे, जिनका समय 7वीं शताब्दी से 12वीं शताब्दी तक रहा। इन सिद्धों ने काफी परिवर्तन के साथ बौद्ध धर्म का ही प्रचार किया। महास्थविर नागार्जुन का शून्यवाद ही इनके लिए स्वीकार्य हुआ। अतः 14वीं–15वीं शताब्दी में बौद्ध धर्म का प्रत्यक्ष रूप से लोप था, लेकिन सिद्धों एवं नाथों के द्वारा यह धर्म जनता में मौजूद था।"

600 ईसा पूर्व से 500 ईसा पूर्व तक बौद्ध धर्म पूरे भारतीय संघ में अपनी जड़ें जमा चुका था। 500 ईसा पूर्व के बाद बौद्ध धर्म भारत की सीमाओं को पार करके पूरे एशिया महाद्वीप में अपने पांव पसार चुका था। ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में तो यह महान धर्म एशिया महाद्वीप को लांघ कर यूरोप की सीमाओं तक पहुंच गया। सम्राट अशोक द्वारा भेजी गई बौद्व भिक्खुणियां ग्रीस, इंग्लैंड, फ्रांस, स्पेन व इटली तक पहुंच चुकी थी। यरूसलेम से 30 किलोमीटर दूर खिरब्रेत कुमराज स्थान पर अशोक कालीन बौद्ध विहार प्राप्त हो चुका है। इन सब बातों के प्रमाण इतिहास के पाताल से खोजे जा चुके हैं।

इधर भारत में बौद्ध धर्म पर अपनी ऐतिहासिक दृष्टि डालते हुए श्याम सिंह जी 'संत रैदास की मूल विचारधारा' पुस्तक में लिखते हैं कि –

"600 ईसवी पूर्व से 150 ईसवी पूर्व तक लगभग 450 वर्ष तक बौद्ध धर्म का स्वरूप व्यवहारिकता में ज्यों का त्यों बना रहा। मौर्य साम्राज्य की समाप्ति के कुछ काल के बाद बाहर के लोगों का आना शुरू होता है। ग्रीक, बैक्ट्रीयन, पार्थियन, शुंग व कुषाण आदि एक के बाद एक आते गए और भारत में बसते गए। बाहर से आने वाले लोगों के अपने कुछ विश्वास थे, मर्यादाएं थीं, प्रथाएं थीं। इनमें से अधिकांश बौद्ध होने लगे, लेकिन विश्वास में भेद था, क्योंकि देश काल व परिस्थिति का अंतर मिलता है। बाहर से आने वाले लोग किसी न किसी देवता को जीवन में आदर्श मान रहे थे। इन लोगों ने जो सर्वोच्च से सर्वोच्च स्थान दिया, वह देवता को दिया हुआ है। ... इस प्रकार 150 ईसा पूर्व से 150 ईसवी तक लगभग 300 वर्ष तक विकास की प्रक्रिया चलती रही। जिसके कारण उसके (बौद्ध धर्म) के स्वरूप में कुछ परिवर्तन दिखलाई पड़े। पुरावेत्ता राम प्रसाद चंदा ने पुरातत्व के आधार पर परिवर्तन की प्रक्रिया को उजागर किया। जिसका कारण दो समाजों का मिलना रहा। 300 वर्ष तक विकास की सतत प्रक्रिया ने बौद्ध धर्म को एक नया स्वरूप प्रदान किया। 600 ईसवी पूर्व से 150 ईसवी तक 750 वर्ष की यात्रा करने के बाद जो विकास धर्म ने किया वह विकसित स्वरूप महायान के नाम से बौद्ध जगत में जाना गया। इस प्रकार हीनयान व महायान दो रूप सामने आए। ... महायान में बहुत से देवता प्रवेश करते चले गए। इससे यह सिद्ध होता है कि समाज की वे छोटी–छोटी इकाइयां जो ट्राइबल ;ज्तपइंसद्ध स्तर पर थीं, जिनमें देवता आदर्श था, बौद्ध धर्म में सम्मिलित होती चल गई, क्योंकि यह एक व्यापक

धर्म था। जब बड़े धर्म में छोटे–छोटे धर्म सम्मिलित होने लगते हैं, तो धीरे–धीरे परिवर्तन आने लगता है। अतः गौतम बुद्ध की पूजा होने लगी। देश की चारों दिशाओं में साक्षी के रूप में प्राप्त बौद्ध संस्कृति के अवशेष की मात्रा इतनी अधिक है कि वह विद्वान व इतिहासकार को यह मानने के लिए बाध्य करती है कि गुप्त साम्राज्य की स्थापना (चौथी सदी) तक भी बौद्ध धर्म ही जनमानस का धर्म रहा। ...

गुप्त साम्राज्य की स्थापना के बाद महायान में परिवर्तन की प्रक्रिया पुनः शुरू होती है। ऐसा पांचवीं शताब्दी में दिखलाई पड़ता है। यह (बौद्ध धर्म) आगे चलकर वज्रयान, मंत्रयान व सहजयान के नाम पर जाना गया। असंगकाल (चौथी–पांचवी ईसवी) में रहस्यवाद जन्म लेता है। ... आद्य आचार्य के अनुसार तांत्रिक तत्व लगभग छठी शताब्दी के पूर्व महायान मे प्रविष्ट हो चुके थे। .... कुछ विद्वान वज्रयान की शुरुआत 8वीं शताब्दी मानते हैं। .... यह परिवर्तन होने पर भी वज्रयान बौद्ध धर्म है। .... वंदना के स्वरूप में कुछ परिवर्तन दिखलाई पड़ता है, लेकिन हर स्थिति में बुद्ध उनका रास्ता था, उनका गुरु था। ..... वज्रयान ही आगे चलकर सहजयान के नाम से जाना जाने लगा। इनका मूल बौद्ध धर्म है। ..... यह परंपरा बंगाल व बिहार में सहजिया संप्रदाय के रूप में 15वीं–16वीं शताब्दी तक रहती है। ..... नाथपंथी सिद्ध संप्रदाय के साथ–साथ मिलते हैं। .... नाथ संप्रदाय में गौतम बुद्ध को आदिनाथ और शिव कहा गया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा है कि गोरखनाथ का मूल भी बौद्ध धर्म था। ...इस संबंध में सारानाथ संग्रहालय में रखी 11वीं सदी की पत्थर से बनी गौतम बुद्ध की मूर्ति को देखा जा सकता है। गौतम बुद्ध को शिव में बदलने का यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। जो ऊपर से शिव जैसी और शेष बुद्ध के रूप में है। ..... 14वीं–15वीं शताब्दी तक सिद्ध संप्रदाय व नाथ पंथ चले आते हैं। .... सिद्धों व नाथों की अनुभूतियों व ज्ञान का सीधा संबंध निर्गुण संत व उनके साहित्य से है। अर्थात जिस ज्ञान व सामाजिक चिंतन को सिद्ध व नाथ एक के बाद एक 14वीं–15वीं शताब्दी तक आगे बढ़ाते रहे, उसे अब निर्गुण संत, विशेष रूप से रैदास व कबीर ने आगे बढ़ाया। .... इस प्रकार बौद्ध धर्म संत रैदास व कबीर साहेब को नाथों व सिद्धों से विरासत के रूप में प्राप्त होता है।.... डॉ.एल.बी. राम अनंत का मत है कि संत रैदास सहजिया संप्रदाय के विद्वान हैं।"

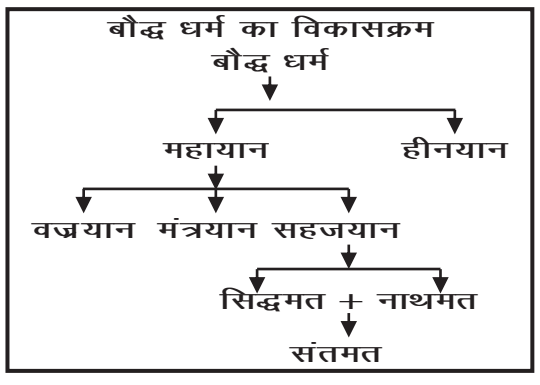

बुद्ध का धर्म संतों तक कैसे पहुंचा ? इस विषय में कंवल भारती जी एक दूसरा ही बड़ा रोचक एवं मान्य अध्ययन प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुसार – जब पुष्यमित्र जैसे पुरोहितशाही राजाओं ने भारत से बौद्ध धर्म को खदेड़ने का अभियान चलाया और बौद्ध भिक्खुओं का कत्लेआम शुरू किया तो जो संपन्न भिक्खु थे, वे भागकर पड़ोसी देशों में चले गए, किंतु बहुत से भिक्खु जो संपन्न नहीं थे, दीन–हीन थे और भागने में असमर्थ थे, गांवों में गृहस्थ वेष में रहने लगे थे। उन्होंने चीवर त्याग दिया था, सिर पर बाल रखने आरंभ कर दिए थे। धीरे–धीरे साधारण नागरिकों की तरह उन्होंने विवाह भी कर लिए थे। चूंकि वर्णाश्रम के कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य उन्हें अपने वर्णों में सम्मिलित नहीं कर सकते थे। अतः दलित जातियों में सम्मिलित होने के अलावा कोई अन्य रास्ता उनके पास था ही नहीं। इन प्रच्छन्न बौद्धों ने दलित वर्गों में रहकर भी बुद्ध धर्म के प्रति आस्था को समाप्त नहीं किया था। बुद्ध के आकार की चौतरी बनाकर वे घरों में ही पूजा–अर्चना करते रहे, जिसका विकृत रूप आज भी उत्तर भारत के दलित घरों में मौजूद है। साथ ही इस डर से कि वे पहचान न लिए जाएं, उन्होंने अपनी प्रत्येक कार्य विधि और अभिव्यक्ति को हिंदू रंग में रंग लिया था। चूंकि मुस्लिम शासक भी बौद्धो के शत्रु थे, इसलिए उन्होंने राम के साथ रहीम तथा वेद के साथ कुरान को भी अपना लिया था और अपने काव्य को ऐसा रूप दे दिया था कि उसमें हिंदुओं का भक्ति योग भी था और इस्लाम का एकेश्वरवाद भी दिखाई दे सकता था। किंतु उनके काव्य का मूलाधार बुद्ध का दर्शन ही था, जिसे उन्होंने हिंदू रंग में डूबोकर इस अंदाज में प्रस्तुत किया था कि उसमें बुद्ध का ज्ञान, प्रेम का निर्झर बनकर फूट पड़ा था। इस प्रेम की विशेषता यह है कि बुद्ध के विरोधी भी उसे अस्वीकार करने का साहस नहीं कर सके। किंतु दलित जीवन कितना कटु एवं पीड़ादायक है, इस यथार्थ को उन्होंने पहली बार ही भोगा था। अतः सामाजिक विषमता और अस्पृश्यता के असहनीय अभिशाप के विरुद्ध उनकी अनुभूतियां विद्रोही हो गईं। उन्होंने दलित जातियों में क्रांति चेतना उत्पन्न करने के उद्देश्य से बुद्ध के दर्शन को विकसित करने की आवश्यकता महसूस की, किंतु बौद्ध धर्म को मूल रूप में प्रतिष्ठित करना तत्कालीन शासन सत्ता में खतरे से खाली नहीं था। इसलिए उन्होंने बुद्ध के दर्शन के अंतर्गत सर्वप्रथम दलित जातियों को स्वतंत्रता और समानता का बोध कराया तथा उनमें स्वाभिमान उत्पन्न किया।

इन्हीं प्रच्छन्न बौद्धों की परंपरा में आगे चलकर कबीर साहेब, रैदास साहेब, चोखा मेला साहेब, सैना साहेब, पीपा साहेब और क्रांतिकारी संत दलित जातियों में पैदा हुए। इन संतों के चिंतन और आचरण दोनों पर ही बुद्ध धर्म का प्रभाव था, लेकिन बुद्ध के अनिश्वरवाद के सिद्धांत के कारण हिन्दू और मुस्लिम दोनों ही बौद्ध धर्म को जीवित देखना नहीं चाहते थे। दलित संतों की समस्या अनीश्वरवाद को सुरक्षित रखने की थी। वे उसे ऐसा रूप देना चाहते थे, जिससे की उसकी मूल भावना भी विद्यमान रहे और शत्रु पक्ष उसकी अर्थवत्ता को समझ भी न सके। अतः वे छद्म ईश्वरवादी हुए। उन्होंने इस परमात्मा को हरि, राम, कृष्ण, रहीम, अल्लाह आदि नामों से पुकारा सिर्फ इसलिए कि तत्कालीन समाज उनकी पहचान नास्तिक रूप में न कर सके। क्योंकि नास्तिक अथवा ईश्वर से इंकार करने वाले ब्राह्मणों के ही दुश्मन नहीं थे, अपितु मुसलमानों को भी दुश्मन थे। गूढ़ अर्थों में उनका निर्गुणवाद बौद्धों के शून्यवाद पर आधारित था जो अनीश्वरवाद का ही दूसरा रूप है।

रविदास वाणी और बौद्ध धर्म

अब तक के अध्ययन में हमने देखा कि किस तरह से बौद्ध धर्म के विकास की प्रक्रिया समय रूपी शिला पर घिसते–घिसते सिद्धों व नाथों से गुरु रविदास जी को प्राप्त हुई। जब हम गुरुजी की वाणी को सामने रखकर उसका विश्लेषण करते हैं, तब पाते हैं कि उन्होंने हूबहू बौद्ध दर्शन को ही आम बोल–चाल की भाषा में आम जनता में प्रचारित किया।

इस विषय में ओशों रजनीश लिखते हैं, ''इसलिए रैदास को मैं कहता हूँ, वे भारत के संतों से भरे आकाश में ध्रुवतारा हैं। उनके वचनों को समझने की कोशिशें करना रैदास इसलिए भी स्मरणीय हैं कि रैदास ने वही कहा है, जो बुद्ध ने कहा है। लेकिन बुद्ध की भाषा ज्ञानी की भाषा है, रैदास की भाषा भक्त की भाषा है, प्रेम की भाषा है। ...

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

रैदास ने फिर बुद्ध की बातें ही कही हैं पुनः, लेकिन भाषा बदल दी, नया रंग डाला। पात्र वही था, बात वही थी, शराब वही थी – नई बोतल दी .... ।

रैदास चमार हैं। जैसे किसी गहन अंतस्थल में बुद्ध अब भी गूंज रहे हैं। वही आग। लेकिन रैदास ने उस आग को आग नहीं बनने दिया, उस आग को रोशनी बना लिया।''

डॉ. विद्यावती मालविका जी ने अपने शेध ग्रंथ 'हिन्दी संत साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव' में बौद्ध धर्म और साध संप्रदाय का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया हैं भगवान बुद्ध द्वारा प्रतिपादित पंचशील की तुलना उन्होंने साध संप्रदाय के सिद्धांतों से निम्न प्रकार से की है–

बौद्ध धर्म	साध संप्रदाय
1. जीव हिंसा से विरत रहो	1. जीव हिंसा न करो
2. बिना दी हुई किसी वस्तु को ग्रहण करने से विरत रहो	2. किसी भी वस्तु के लिए लालच न करो
3. कामभोगों में मिथ्याचार से विरत रहो	3. एक पत्नी तथा एक पति का व्रत ग्रहण करो
4. असत्य भाषा से विरत रहो	4. कभी असत्य न बोलों
5. मादक द्रव्यों का व्यवहार न करो	5. शराब आदि मादक द्रव्यों से विरत रहो

पंचशील सिद्धांत और गुरु रविदास वाणी

ऊपर उल्लेख किए गए पंचशील सिद्धांतों का रविदास जी की वाणी में अथाह सागर उमड़ रहा है।

पहला सिद्धांत

पंचशील सिद्धांतों में पहला सिद्धांत जीव हिंसा से विरत रहने का है। इसका समर्थन करते हुए रविदास जी कहते हैं कि –

'रविदास' जीव कूं मारि कर, कैसों मिलिहिं खुदाय
पीर पैगम्बर औलिया, कोउ न कहइ समुझाय
'रविदास' मूंडह काटि करि, मूरख कहत हलाल
गला कटावहु अपना, तऊ का होइहि हाल
प्राणी बध नहिं कीजियहि, जीवह ब्रह्म समान
'रविदास' पाप नहं छूटइ, करोर गउन करि दान
'रविदास' जीव मत मारहिं, इक साहिब सभ मांहि
सभ मांहि एकउ आत्मा, दूसरह कोउ नांहि

दूसरा सिद्धान्त

पंचशील का दूसरा सिद्धांत बिना दी हुई किसी वस्तु के ग्रहण करने से विरत रहने का है। गुरु जी इस सिद्धांत का जोरदार समर्थन करते हैं। वे मेहनत की कमाई पर जीवन–यापन के पक्षधर हैं–

'रविदास' स्रम करि खाइहि, जौ लौ पार बसाय
नेक कमाई जउ करइ, कवहूं न निहफल जाय
स्रम कउ ईसर जानि कै, जउ पूजहि दिन रैन
''रविदास' तिन्हहि संसार मंह, सदा मिलहि सुख चैन
'रविदास' हौं निज हत्थहिं, राखौ रांबी आर
सुकिरित ही मम धरम है, तारैगा भव पार
प्रभ भगति स्रम साधना, जब मंह जिन्हहि पास
तिन्हहि जीवन सफल भयो, सत्त भाषै 'रविदास'

तीसरा सिद्धांत

काम भोगों के मिथ्याचार से विरत रहने की शिक्षा गुरु रविदास जी एक पपीहे के प्रतीक द्वारा बड़े सुंदर शब्दों में देते हैं–

ऐक अभिमानी चात्रिगा, विचरत जग मांही ।
जदपि जल पूरण मही, कहूँ वा रूचि नाहीं।।
जैसे कामी देषै कामिनी, रिदै सूल उपाई।
कोटि बैद बिध उपचरै, बाकी बिथा न जाई।।
जो जिहिं चाहे सो मिलै, आरति गति होई।
कहै 'रविदास' यहु गोपि, नाहीं जानै सब कोई।।

अर्थात स्वाति का जल पीने की अपनी जिद पर अड़ा पपीहा संसार भर में विचरता है। यद्यपि धरती जल से भरी हुई है। फिर भी उस पपीहे की रुचि उसमें नहीं है। ठीक उसी प्रकार कामी के हृदय में कामिनी को देखकर जो प्रेम की पीड़ा उभरती है, वह करोड़ों वैद्यों के अनेकानेक उपचार से भी दूर नहीं होती ।

एक अन्य स्थान पर वे लिखते हैं–

''काम क्रोध में जन्म गंवायौ, साध संगति मिलि राम न गायो''

चौथा सिद्धांन्त

असत्य भाषा से विरत रहने के चौथे पंचशील सिद्धांत को रविदास जी समर्थन देते हुए कहते हैं–

''रविदास सत्त मति न तिआगिए, जौ लौं घट मंहि प्रान
सत्त भ्रिस्ट करि जगत मंहि, सदा होत अपमान
जिन्ह नर सत्त तिआगिया, तिन्ह जीवन मिरत समान
रविदास सोई जीवन भला, जहं सभ सत्त प्रधान

पांचवां सिद्धान्त

पंचशील का पांचवां सिद्धान्त है मादक द्रव्यों से विरत रहना। रविदास जी ने इसकी जोरदार वकालत की हैं वे बार–बार कहते हैं–

''सुरसरी सलल कृत बारूनी रे संत जन करत नहीं पान''

अर्थात् यदि शराब गंगाजल से भी बनाई गई हो, तब भी संत जन उसे नहीं पीते।

'रविदास' मदुरा का पीजियै, जो चढ़ै–चढ़ै उतराय।
नांव महारस पीजियै, जौ चढ़ै नाहि उतराय।।

अर्थात् रविदास जी कहते हैं कि उस शराब का पीना भी क्या पीना, जिसका नशा एक बार चढ़ने पर उतर जाता है और उसे बार–बार पीना पड़ता है। पीना ही है, तो सतनाम रूपी महारस को पीना चाहिए। जिसका नशा एक बार चढ़ने के बाद फिर कभी नहीं उतरता।

मोटे तौर पर हमने देखा कि बुद्ध द्वारा पांचशील के सिद्धांतों का गुरु रविदास जी ने खूब प्रचार–प्रसार किया है। अगले पृष्ठों में हम बौद्ध धर्म के अन्य मुख्य सिद्धांतों आदि का गुरु रविदास की वाणी से तुलनात्मक अध्ययन करेंगे।

सिद्धों का वज्र (मणि) गुरुजी का हीरा

डॉक्टर धर्मवीर भारती जी अपने शोध्र प्रबंध 'सिद्ध साहित्य' में लिखते हैं कि ''सिद्धाचार्यों द्वारा अभिसित वज्र या मणि के उस अर्थ को तो संत भूल चुके थे, किंतु सहज पद्धति के साथ चित्त को मणि अथवा हीरा बनाने की प्रक्रिया उनकी परंपरा में अवस्थित रह गई थी। रविदास जी के शब्दों में–

पीवत डोलत फूल फल अमृत सहज भई मति हीरा

एक अन्य स्थान पर तो वे हरि भी हीरा के रूप में चित्रित करते हैं–

हरि सो हीरा छाड़ि के, करे आन की आस।
वो नर दोजख जाएंगे, सत भाषै रविदास।।

एक अन्य स्थान पर गुरुजी लिखते हैं–

ताउ हीरा हाथ परै।

सिद्धों की वज्र (मणि) को गुरु जी एक स्थान पर पारस मणि भी कहते हैं–

परसु परसै दुबिधा न होई

गुरु रविदास जी का सत्तनाम

डॉ. विद्यावती मालविका अपने शोधग्रंथ 'हिंदी संत साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव' में लिखती हैं कि कबीर ने जिसे सतनाम कहा है और सतगुरु से प्राप्त महौषधि माना है, जिसका स्मरण करना परमावश्यक है, क्योंकि उसी के स्मरण से परमपद की प्राप्ति होगी। वह सत्तनाम पालि भाषा के 'सच्चनाम' का रूपांतर है। पालि भाषा में 'सच्चनाम' का प्रयोग भगवान बुद्ध के लिए हुआ है। अंगुत्तर निकाय के चार सूत्रों की गाथाओं में बार–बार 'सच्चनाम' को दुहराया गया है–

'अक्खाता सच्चनामेन उभयत्थ सुखावहा''

अर्थात् सच्चनाम (सत्तनाम) ने इन्हें दोनों लोकों के लिए सुखदायक कहा है। ऐसे ही बुद्ध के लिए पालि ग्रंथो में सच्चनिकम्मो (सत्यवादी), सच्चह्वयो (सत्यनाम वाले) सच्चवादी (सत्यवादी) आदि शब्दों का व्यवहार हुआ है। मज्झिम निकाय के इसिगिल सुत्त में 'सत्यनाम' से एक प्रत्येक बुद्ध का भी उल्लेख मिलता है। इससे स्पष्ट है कि सच्चनाम वाले भगवान बुद्ध ही कबीर के सत्तनाम हो गए हैं।''

डॉ. मालविका जी ने पालि के सच्चनाम का अध्ययन कबीर जी पर किया है, लेकिन यह शब्द हम नानक से लेकर रविदास तक हर निर्गुणियां संतों के साहित्य में उपलब्ध पाते हैं।

रविदास जी की वाणी में इसका खूब प्रयोग हुआ है–

इड़ा पिंगला सुसुम्णा, बिध चक्र प्रणयाम।
रविदास हौं सबहि छांड़ियो, जबहि पाइहू सत्तनाम।।
इक चिंता सतनाम की, दरसाइहु परम तत्त।
सहज परम भक्ति भई, 'रविदास' पाइहि ब्रह्म सत्त।।
''कहै 'रविदास' नामु तेरो आरती, सतिनामु है हरि भोग तुहारे।।''
अंतर्मुखी भइ जउ करहिं, सत्तनाम करि जाप।
रविदास तिन्ह सौं भजहुहिं, जगतह तीन्हहु ताप।।
'रविदास' अराधहु देवकूं, इकमल हुई धरि ध्यान ।
अजपा जाप जपत रहहु, सत्तनाम सत्तनाम।।

यहाँ यह बात भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि गुरु रविदास जी ने सतनाम के साथ ही कहीं–कहीं 'सत्तराम' का भी उल्लेख किया है, जैसे –

भाई रे! राम कहां माहि बताओ 'सत्तराम', ताके निकट न आओ।
मन रैदास उदास ताहि ते करता जग बिसराई।
केवल करता एक सही सिर, 'सत्तराम तेहि नाईं ।।

इस 'सत्तराम' का विश्लेषण प्रसिद्ध विद्वान भद्रशील रावत जी ने बहुत स्पष्ट शब्दों में किया है, ''और यह भी सत्य है कि यह 'सत्यराम' ही रूपांतरित होकर 'सत्यनाम' हो गया है।''

वास्तव में यहाँ पर गुरु रविदास जी ने 'सत्तराम' जी का उल्लेख किया है। वह ब्राह्मणों के वर्णाश्रमी राम के मुकाबले का अविनाशी राम (सत्तराम) है। क्योंकि अयोध्यावासी राम तो जन्म–मरण के चक्र में पिसता हुआ राम है, वह अविनाशी राम नहीं है–

राम कहत सब जग भुलाना।
सो यह राम न होई।।
''रविदास हमारो राम जी दशरथ करि सुत नांहि।''

नाम महिमा

गुरु रविदास जी ने नाम की बड़ी महिमा गाई है। इस नाम महिमा का उल्लेख बौद्धों ने भी खूब किया है। बुद्धघोष द्वारा लिखित 'विशुद्धि मार्ग' के अठारहवें अध्याय में नाम महिमा का निर्देशन देखा जा सकता है।

''नाम मूल हे ग्यान कौ, नाम मुक्ति कौ दवार''
''सोइ तन कंचन जानइ, जिह तन नाम परगास।''
''रविदास सत्त इक नाम है, आदि अंत सचु नाम'',
''जनम मरनु अरु जग जाला, नाम परताप न बिआपहि ब्याला।''
''भौ सागर रा तरन कूं, एकौ नाम अधार''
नामु तेरो आरती मजुन मुरारे।
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पसारे।।
नामु तेरे आसनो नामु तेरो उरसा, नाम तेरो केसरो ले छिटकारे।
नामु तेरो अंभुला नामु तेरो चंदनो,
घसि जपै नामु ले तुझहि कउ चारे
नामु तेरो दीवा नामु तेरो बाती नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे।
नाम तेरे की जोति लगाई, भइओ उजियारों भवन सगलारे
नाम तेरे तागा नाम फूल माला भार अठारह सगल जुठारे
तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ,
नामु तेरा तुही चवर ढोलारे।।
दसअठा अठसठे चारे खाणी, इहै वरतणि है सगल संसारे
कहै रविदासु नामु तेरो आरती, सतिनामु है हरि भोग तुहारे।

अर्थात् हे प्रभु मेरे लिए तो तुम्हारा नाम ही आरती और तीर्थ स्थान है। तुम्हारें नाम के बिना पूजा–पाठ के सभी बहिर्मुखी विस्तार झूठे आडंबर हैं। तुम्हारा नाम ही मेरे

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

लिए आसन है। तुम्हारा नाम ही केसर रगड़ने की सिल है तथा नाम रूपी केसर को लेकर ही मैं तुम्हारें ऊपर छिड़कता हूँ। तुम्हारा नाम ही मेरे लिए पानी है, नाम ही चंदन है तथा नाम सुमिरन द्वारा ही मैं नाम रूपी चंदन को घिसकर तुम्हें लगाता हूँ। तुम्हारा नाम ही मेरे लिए दीपक, नाम ही बाती है और नाम ही तेल है। जब मैंने तुम्हारें नाम की ज्योति जलाई तक मेरे अंदर के भवन में उजियारा छा गया। तुम्हारा नाम ही मेरे लिए धागा है, नाम ही फूलमाला है। अतः पत्थर की मूर्तियों पर चढ़ाई जाने वाली अट्ठारह भार की माला झूठी है। अठ्ठारह पुराणों तथा अड़सठ तीर्थों में उलझा समस्त संसार चार प्रकार की योनियों में चक्कर लगा रहा है। रविदास जी कहते हैं कि हे प्रभु तुम्हारा नाम ही मेरे लिए आरती है और मैं सच्चे नाम (सत्तनाम) का ही भोग तुम्हें अर्पित करता हूँ।

सहज समाधी

सिद्ध आचार्यों के सहज समाधि, सन्न अदि का वर्णन जब हम गुरुजी की वाणी में पढ़ते हैं, तब हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि गुरुजी सहजयानी बौद्ध थे। इसी संबंध में प्रो. एच.सी. जोशी (एच.सी. बौद्ध) जी लिखते हैं–

''गुरु (रैदास जी) की अष्टांग साधना बौद्ध धर्म के आर्य आष्टांगिक मार्ग का ही प्रतिरूप है। निर्वाण सहज शून्य, सहज समाधि, तज्र हठयोग, उल्टी साधना, अनित्य अशुभ आदि की भावना, परमतत्व आदि गुरुजी पर पड़े बौद्ध प्रभाव के द्योतक है। रविदास जी का सहज शून्य बौद्ध धर्म का निर्वाण ही है।'' गुरुजी की वाणी से कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं–

''कहत रैदास सहज सुन्न संत''
''बिन सहज सिद्ध न होय''
मन ही पूजा मन ही धूप
मन ही सेऊ सहज सरूप
सहज सुन्न में भाठी सखै, पीवै रैदास गुरुमुख दखै
बट का बीज जैसा आकाश, पसरयो तीन लोक पसारा
जहां का उपजा तहां बिलाई, सहज सुन्नि में रह्यो लुकाई
पहलै ग्यान का किया चांदिना, पीछै दीया बुझाई।
सूंनि सहज मैं दोऊ त्यागै, राम कहौं न खुदाई।।
''सहज परम भक्ति भई''
चलत–चलत मेरो मन थाकयो, अब मो पै चल्यो न जाई।
सोई सहजि मिल्यौ सोई सनमुख, कहै रविदास बड़ाई।।
''गुरु की सारि ज्ञान का अच्छर।
बिसरै तो सहज समाधि लगाऊं।।''
''सुन्न मंडल में मेरा वास''
''कह रविदास निरंजन ध्याऊं''
''सहज–समाधि उपाधि रहत फुनि''

इसी सहज सुन्न को नाथ संप्रदाय के गुरु गोरखनाथ जी ने अपने ग्रंथ 'सबदी' में लिखा है–

''बसती न सून्यं सून्यं न बसती अगम अगोचर ऐसा''

ब्राह्मणों की पोप लीला का विरोध

गुरु रविदास जी ने अपनी निर्भीक वाणी द्वारा ब्राह्मणों के खूनी महल की नींव हिला कर रख दी थी (देखें अध्याय धर्म के ठेकेदारों से ठन गई)। उनसे पहले बौद्धों ने भी ब्राह्मणों की पोप लीला की कसकर खबर ली थी।

आचार्य अश्वघोष जैसे बौद्ध दार्शिनिक तो यहाँ तक लिखते हैं, ''यदि ब्राह्मण की उत्पत्ति ब्रह्मा के मुख से हुई है, तो ब्राह्मणी की उत्पत्ति कहां से हुई? निश्चय ही ब्रह्मा के मुख से। यदि ऐसा ही है, तो वह ब्राह्मण की बहन हुई। इस तरह के संबंध लोकाचार के विरुद्ध हैं।''

बौद्ध दार्शनिक आचार्य धर्मकीर्ति जी ब्राह्मणों की पोपलीला पर करारा प्रहार करते हुए कहते हैं–

वेद प्रामाण्यं कस्यचित् कार्तृवादः स्नाने धर्मेच्छा जातिवादालेपः।
संतापारंभः पापहानाय चेति ध्वस्त प्राानांलिंगानि पंचजाड्ये।।

''वेद (ग्रंथ) की प्रमाणिकता, किसी (ईश्वर) का (सृष्टि), कर्त्तावाद, स्नान (करने) में धर्म (होने) की इच्छा रखना, जातिवाद का घमंड और पाप दूर करने के लिए (शरीर को) संताप देना, उपवास आदि करना। ये पांच अकल के मारे लोगों की मुर्खता की निशानियाँ हैं।''

हालांकि पूरा बौद्ध दर्शन ही ब्राह्मणवाद के खिलाफ एक खुला विद्रोह है। यहाँ उसकी एक झलक ही काफी है।

धम्मपद में भगवान बुद्ध कहते हैं–

न चाहं ब्राह्मणं ब्रूमि योनिजं मत्ति सम्भवों।
'भोवादी' नाम सो होति स चे होति सकिंचनो।
अकिंचनं अनादानं तमहं ब्रमि ब्राह्मणं।
धम्मपद–396

आर्थात् माता की योनि से पैदा होने के कारण में किसी को ब्राह्मण नहीं कहता। यदि वह धन से संपन्न हैं, तो वह भोगवादी है। जो परिग्रही है और त्यागी है, उसे ही मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

न जटाहि न गोत्तेहि न जच्चा होति ब्राह्मणों।
यम्हि सच्चंच धम्मों व सो सुची सो ब्राह्मणो।।
धम्मपद–393

अर्थात् न तो कोई ब्राह्मण इसलिए ब्राह्मण होता है कि उसने जटाएं बढ़ा ली हैं। न इसलिए कि उसका गोत्र ऊंचा है। न इसलिए कि उसने नारी की कोख से जन्म लिया है। किसी को तभी ब्राह्मण कहा जा सकता है, जिसमें सत्यता हो और धार्मिकता हो। वही पवित्र है और वही ब्राह्मण है।

मन नियंत्रण

बौद्ध परंपरा में सभी आचार्यों ने मन के नियंत्रण पर जोर दिया है। इस मन को साधे बिना कुछ भी प्राप्त नही हो सकता। धम्मपद की एक गाथा है–

मनो पुब्बंगमा धम्मा मनों सेठ्ठा मनोमया।
मनसा चे पदुठ्ठेन भासति वा करोति वा,
ततो नं दुक्खमन्वेति चक्कं' व वहतो पदं।।
धम्मपद –1

अर्थात् मन सभी प्रवृत्तियों का अगुआ है, मन उनका प्रधान है, वे मन से ही उत्पन्न होती हैं। यदि कोई दूषित मन से वचन बोलता है या काम करता है, तो दुख उसका अनुसरण उसी प्रकार करता है, जिस प्रकार की चक्का गाड़ी खींचने वाले बैलों के पैरों का।

गुरु रविदास जी ने भी मन के नियंत्रण का वर्णन बौद्धों की ही विचाराधारा के अनुरूप किया है–

मन मेरो थिरु न रहाई
कहि रविदास मन थिरु हैसी, चलि सब छांड़ी गुरु सरणाई।।
''रेचित! चेति चेत अचेत''
''मन ही पूजा मन ही धूप, मन ही सेऊ सहज सरूप''
''जब मन मिल्यो, आस नहि तन की''
''मन चंगा तो कठौती में गंगा''

गुरु महिमा

गुरु की महिमा का गान वज्रयानी बौद्धों ने खूब गाया है। वज्राचार्य इंद्रभूति जी के श्ब्दों में ''जिस साधक के ऊपर गुरुजी की कृपा रहती है, वही उत्तम तत्त्व की प्राप्ति करता है, अन्यथा चिरकाल तक मूड़ रह कर क्लेश पाता है। गुरु (रास्ता) ही बौद्ध धर्म और संघ है। उसी की कृपा से रत्नत्रय का ज्ञान प्राप्त होता है। अज्ञान के तिमिरांधों के लिए वह मार्ग प्रदर्शक है। सभी आनंदों का आश्रय है। सभी प्रकार की इच्छाओं को पूर्ण करने वाला है। उसके समान और पूजनीय और महामुनि नहीं है। इसी लिए सभी प्रकार के प्रयत्न कर व्रती को गुरु की पूजा करनी चाहिए।'' (टू वज्रयान वर्क्स संकलन–डॉ. विनयघोष भट्टाचार्य, श्लोक–23–26, पृष्ठ 33)

इस विषय पर नगेंद्रनाथ उपाध्याय जी लिखते हैं कि ''गुरु पद ही बुद्ध पद है।... वज्रयानी ग्रंथों में गुरु को बुद्ध के समान पद दिया गया है। प्राचीन बौद्ध साहित्य में भी गुरु को रास्ता कहा गया, जिसका अर्थ गुरु होता है।''

अपने पूर्ववर्ती बौद्धों से प्रेरणा लेते हुए गुरु रविदास जी ने भी गुरु की खूब महिमा गाई है। वे कहते हैं–

''संत अनंतहि अंतर नाहिं''
हरि गुर साध समान चित, नित आगम तत मूल।
इन बिच अंतर जिन परौ, करवत सहन कबूल।।

सेवा में,

नाम .....

पता .....

.....

.....

अर्थात् परमात्मा, सतगुरु और साधु–संतों का हृदय एक समान होता है। यही शास्त्रों (बौद्ध ग्रंथो) का मूल तत्त्व है। इनके बीच कोई फर्क नहीं समझना चाहिए। इस सत्य का अनुसरण करने से यदि आरे से चीरे जाने की यातना भी सहनी पड़े तो उसे सहर्ष स्वीकार करना चाहिए।

अन्य स्थानों पर गुरु की महिमा रविदास जी ने इस प्रकार गाई है–

''गुरु ग्यानं दीपक दिया, बाती दई जलाय।''
''रविदास गुरु ग्यानं चाषु बिना, किमी मिटइ भ्रम फंद''
''रविदास गुरु रा ग्यांन बिनु, बिरला कौ बचि जाय''
''रविदास गुरु पतवार है, नाम नाव करि जान''
''कहि 'रविदास' मिल्यों गुर पूरौ, जिहि अंतर हरि मिलावै''
''सत गुर हमहु लषाई बाट''
''कहि रविदास गुरु राह दिषावह त्रिषा बुझि मिटि मन संताप।।''

''संत साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव' नामक शोध ग्रंथ में डॉ. विद्यावती मालविका जी लिखती हैं–

''गुरुजी की वाणी में अलख निरंजन, शून्य, सहज–शून्य, सत्यनाम, घट–घट व्यापी, ब्रह्म निर्गुण तत्त्व, तपतीर्थ स्नान की निस्सारता, आवागमन, अवधूत, मूर्ति पूजा की व्यर्थता, सुरति (स्मृति) शील, अनित्य अशुभ परमपद, निर्वाण, सन्यास तथा वेष धारण की निरर्थकता, गुरु महिमा, सत्संग से परम पद की प्राप्ति, सतगुरु, नाम महिमा, जन्म जात श्रेष्ठता (जातियता) का निषेध, ग्रंथ प्रमाण का बहिष्कार आदि बौद्ध तत्त्व साधना एवं विचारों के समन्वय पाए जाते हैं।''

डॉ. मालविका जी का उपरोक्त अध्ययन सत्य की कसौटी पर खरा उतरता है, जब हम रविदास जी की वाणी का इसी दृष्टि से अवलोकन करते हैं। उदाहरण के तौर पर भगवान बुद्ध के विश्वविख्यात वचन ''बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय'' का रविदास जी ने अपने शब्दों में कुछ यूं वर्णन किया है–

''संतन के मन होत है सबके हित की बात''

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के शब्दों मे, ''यदि कबीर आदि निर्गुण मतवादी संतों की वाणियों की बाहरी रूप रेखा पर विचार किया जाए, तो मालूम होगा कि यह संपूर्णतः भारतीय है और बौद्ध धर्म के अंतिम सिद्धों और नाथपंथी योगियों से उनका सीधा संबंध है।''

गुरु रविदास जी भगवान बुद्ध के वारिस थे, इस विषय पर हमारे अब तक के अध्ययन के बाद कोई शंका शेष नहीं रह जानी चाहिए। अतः इस अध्ययन को मैं श्याम सिंह जी के शब्दों से ही समाप्त करना चाहूंगा। वे लिखते हैं, ''बौद्ध साधना को समझाने की जो पद्धति संत रैदास ने अपनाई, वह सिद्ध करती है कि विरासत के रूप में बौद्ध धर्म व नाम सिद्धों से उनको प्राप्त हुआ। जिस प्रकार नाथ व सिद्ध आचार्यों ने भगवान बुद्ध की शिक्षा को आगे बढ़ाया, संत रैदास जी ने उसको फैलाने में कोई कसर बाकी नही छोड़ी। यह स्थिति संत रैदास को सहजयान से जोड़ती है। इसलिए स्वतः उनका सीधा संबंध भगवान बुद्ध से जुड़ जाता है। संत रैदास सहजयान संप्रदाय के विद्वान थे, जो बौद्ध धर्म का परवर्ती रूप है।''

साभार :
गुरु रविदास की हत्या के प्रमाणिक दस्तावेज

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।